6

वैदिक यज्ञ

प्रस्तावना

वैदिक काल से भारतीय संस्कृती में यज्ञों का अनुष्ठान शुभ कार्य का सूचक होने से महान फल लाता ही है इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है। यज्ञ शुद्धी भवन की क्रिया विशेष होता है। इस क्रिया में अग्नि पवित्रता के प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठापित की जाती है। आयुर्वेद के औषधीय-विज्ञान के मतानुसार यज्ञ में अग्नि से उत्पन्न धुएँ से वायु शुद्ध होती है यह गुण यज्ञ के प्रचार और प्रसार में बहुत ही सहायक सिद्ध होता है। जैसे कि याग के माहात्म्य के विषय में भगवान ने भगवद्गीता में कहा गया है कि-अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृताम वर (8/4)। यज्ञशब्द के तीन अर्थ हैं -- 1- देवपूजा, 2-दान, और 3-संगतिकरण। संगतिकरण का अर्थ संस्थापन है। यज्ञ का एक प्रमुख उद्देश्य धर्मिक प्रवृत्ति और सत्प्रयोजन की सिद्धि में लोगों का एक मिलनसार साधन होना है। इस कलयुग में संघ में शक्ति मुख्य है। परास्त हुए देवताओं की पुनः विजय के लिए प्रजापति ने उनकी पृथक्-पृथक्-शक्तियों का एकीकरण करके एक संघ-शक्ति के रूप में दुर्गा-शक्ती का प्रादुर्भाव किया। और उससे सभी आपदाएं दूर हो गई। मानवजाति की समस्याओं का समाधन समूह शक्ती संघ में गूहित है, अकेला मानव दुर्बल और स्वार्थी हो जाता है।

यज्ञ का तात्पर्य त्याग होता है। अपना प्रिय पदार्थ अग्नि तथा वायु के माध्यम से सकल संसार के कल्याण के लिए यज्ञ के द्वारा बाँटा जाता है। वायु के शोधनसे सभी के आरोग्य वर्धन का अवसर प्राप्त होता है। आहूत वायु प्राणी मात्र का स्वास्थ्य वर्धन करती है, और रोग निवारण में सहायक होती है। यज्ञकाल में उच्चरित वेदमन्त्रों से लोगों के अंतःकरण में सात्त्विक शुद्धता उत्पन्न होती है। इस प्रकार स्वल्प प्रयास से ही लोगों का महान् उपकार होता है। यदि माता अपने रक्त-मांस के एक भाग को एक नवजातक के निर्माण के लिए नही छोड़ती, प्रसव वेदना को सहन नहीं करती, नवजातक को दुग्ध नहीं पिलाती, पालन-पोषण आदि में यत्न नहीं करती, सब निःस्वार्थ भाव से नहीं करती, तो मनुष्यों का जीवन सम्भव नहीं है।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे–

- यज्ञ आदि का भेद जान पाने में;
- होम की विधि आदि जान पाने में;
- इष्ट्यादी के विषय में विशिष्ट ज्ञान प्राप्त कर पाने में;
- पशु यागों की विधि जान पाने में;
- सोम आदि यागों की विधि आदि जान पाने में;
- सत्र याग के विषय में ज्ञान प्राप्त कर पाने में;
- स्वयं भी यागादि के विषय में लघु प्रबन्ध रचना कर पाने में।

6.1 यागों का सामान्य परिचय

यागों के सामान्यत: पांच प्रकार देखे जाते हैं– होम, इष्टि, पशु, सोम, और सत्र। वैदिक याग प्रकृति और विकृति के भेद से दो प्रकार के हैं। प्रकृतियाग प्रधानयाग कहलाते हैं। प्रत्येक प्रकृतियाग की बहुत सी विकृतियाँ हैं। समान जातीय यागों का मूल स्वरूप प्रकृति याग कहलाता है। उसी प्रकृतियाग के आश्रय में विकृतियाग अनुष्ठीत होते हैं। विकृतिया का दूसरा नाम अङ्गयाग है। प्रकृतियाग अंगी है। पांच प्रकार के प्रकृतियागों की प्रकृति यहाँ दिखाई गयी है।

6.1.1 होम

होम याग दर्वीहोम कहलाता है। इस याग में प्रतिदिन प्रात: काल और सायंकाल गृहस्थ के अग्निकुण्ड में दूध, दही, पुरोडाश आदि की आहुति दी जाती है। सूर्य और अग्नि इस होमयाग के देवता हैं। प्रात: सूर्य को तथा सायं को अग्नि उद्देश्य करके मन्त्रपाठ आहुति दी जाती है। क्योंकि दर्वी के अग्निकुण्ड में आहुति दी जाती है। अत: इसे दर्वीहोम भी कहते हैं। होमजातीय यागों की प्रकृति अग्निहोत्र है। वैदिक काल में ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य के लिए प्रतिदिन अग्निहोत्र अनिवार्य था। उनको स्वयं ही यह यज्ञ करना होता था, पुरोहित के द्वारा इसे करने की विधि नहीं थी। क्षत्रिय और वैश्य तो पुरोहित से करवाते थे। लेकिन ब्राह्मण को प्रतिदिन स्वयं अग्निहोत्र करना होता था।

ब्राह्मण प्रतिदिन अग्निहोत्र करे ''ब्राह्मणोऽहरह: अग्निहोत्रं जुहुयात्'' यह श्रुति प्रमाण है। शतपथ ब्राह्मण की उक्ति है ''एतद्वै जरामर्यसत्रं जरया ह्येवास्मात् मुच्यते मृत्युना वा'' अर्थात् अग्निहोत्र ही जरामर्यसत्र कहा जाता है। इसी कारण मृत्यु के बीना इस याग के नित्यानुष्ठान

से ब्राह्मण की निष्कृति नहीं है। यह ब्राह्मण का नित्य कर्म है। आज भी दाक्षिणात्य और महाराष्ट्र में बहुत से अग्निहोत्रकारी ब्राह्मण दिखते हैं। इस याग में प्रातः सूर्य तथा सायं अग्नि को उद्देश्य मानकर आहुति दी जाती है। एक ही मन्त्र प्रातः और सायं दोनों समय पढ़ा जाता है। प्रातः केवल "सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः" तथा सायं सूर्य शब्द के स्थान पर अग्नि शब्द का प्रयोग करके "अग्निर्ज्योतिः ज्योतिरग्निः" ऐसा पढ़ा जाता है। सायंकाल में सूर्य उसका तेज अग्नि में प्रतिष्ठापित करके अस्त हो जाता है, अतः सूर्य के स्थान पर अग्नि का पाठ विहित है। प्रातःकालीन आहुति सूर्योदय से पूर्व तथा, सायंकालीन आहुति सूर्य के अस्तगमन के बाद देनी चाहिए इस विषय में ब्राह्मण ग्रन्थों में ऐसा विचार है। एक पक्ष में प्रातः सूर्योदय से पूर्व होम का विधान है, उनके मत में यदि ऐसा नहीं करते तो आदित्य आहुति को स्वीकार नहीं करता है। सूअर उस आहुति को स्वीकार करता है। दूसरे पक्ष में इसके विपरीत मतं प्रदर्शित किया गया है। सूर्योदय होने पर आहुति का दान निष्फल होता है। इस प्रकार दोनों पक्षों के मतानुसार आहुति प्रदान करनी होती है। श्रौत सूत्र में इस विवाद का समाधान विहित है। वेद के शाखा भेद के अनुसार ही आहुति के समय का भी भेद किया गया है। जैसे- बह्वृच्-छन्दोमय शाखा के द्विजातिगण सूर्योदय से पूर्व होम करें। इस कारण वे अनुदित होमी कहलाते हैं। दूसरी जगह कठ-तैत्तरीय-मैत्रायण शाखा के ब्राह्मण उदय के बाद में ही होम करें ऐसा विधान है। इसलिए वे उदित होमी कहलाते हैं। किन्तु दोनों ही सूर्योदय से पूर्व ही गार्ह पत्याग्नि का चयन करके होम कुण्ड का प्रज्वालन करें।

अग्निहोत्र का प्रधान आहुति द्रव्य दुग्ध है, इसलिए यजमान एक गाय का पालन करता है। वह अग्निहोत्री गाय कहलाती है। यज्ञवेत्ता मृदा के एक पात्र से दुग्ध गर्म करता है। वह उष्ण दूध अग्निहोत्रवनी इस नाम से दर्व्य अग्नि में आहूत किया जाता है। प्रातः दो आहुति एक सूर्य, और दूसरी प्रजापति को उद्देश्य करके दी जाती है। जिस दिन अग्निहोत्र आरम्भ किया जाता है। उसी दिन सायंकाल में भी अग्निहोत्र करना होता है। उसी कारण यह अग्निहोत्र नाम से प्रसिद्ध होता है **स्तम्भ श्रौत सूत्र के मत में।**

पहले ही कहा गया है कि ब्राह्मण को स्वयम् ही यह करना होता है। यदि ब्राह्मण अस्वास्थ्य के कारण अक्षम हो तो वह कार्य उसके पुत्र को, और पुत्राभाव में पुरोहित करे। किन्तु पूर्णिमा तथा अमावास्या पर अस्वस्थ होते हुए भी ब्राह्मण को ही करना चाहिए। अविवाहित को अग्निहोत्र का अधिकार नहीं है। विवाहित है किन्तु जो विपत्नीक हो गया, उसको भी अधिकार नहीं है। अतः पुनर्विवाह करना होता है। ऐतरेयब्राह्मण में लिखा है कि यदि उसकी पत्नी मर चुकी है तो पुनर्विवाह करना चाहिए अथवा श्रद्धा को पत्नी रूप में कल्पित करके ब्राह्मण अग्निहोत्र करे।

पाठगत प्रश्न

641. होमयाग का दूसरा नाम क्या है?

642. होमयाग की प्रकृति क्या है?

643. किनके लिए अग्निहोत्र आवश्यक था?

644. अग्निहोत्र करने का अधिकार किसको है?

645. विपत्नीक अग्निहोत्री क्या करे?

6.1.2 इष्टि

इष्टि याग की प्रकृति दर्श पूर्णमास है। दर्शशब्द का अर्थ सूर्येन्द्ु सङ्गम अर्थात् अमावस्या है। पौर्णमासी अर्थात् पूर्णिमा। यह यज्ञ पूर्णिमा और अमावास्या को किया जाता है। विवाहित, सस्त्रीक आहिताग्नि ब्राह्मण तथा क्षत्रिय अथवा शूद्र भी इस याग के अधिकारी हैं। आहिताग्नि शब्द का अर्थ जिसने गार्ह पत्याग्नि को प्रतिष्ठित किया है। अमावास्या पर दो दिन तथा पूर्णिमा पर दो दिन इस याग का अनुष्ठान करना चाहिए। यह याग पूर्णिमा की प्रातः आरम्भ होता है तथा दुसरे दिन अर्थात् प्रतिपदा के मध्याह्न में समाप्त होता है। अमावास्या पर भी इसी प्रकार का अनुष्ठान विहित है। इस याग का प्रथम दिवस पूर्णिमा हो। अर्थात् अमावास्या पर इसका आरम्भ न करें। इस याग में चार पुरोहित होते हैं - होता, अधवर्यु, अग्नीध्र, और ब्रह्मा। पुरोहितों में तारतम्य नहीं है। सोमयाग में ब्रह्मा सर्वश्रेष्ठ होता है। सभी उसके प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हैं। किन्तु इष्टियाग में सभी पुरोहितों का अधिकार समान होता है। यद्यपि विविध गौण आहुतियाँ तथा देवताओं के नाम इष्टियाग में होते हैं, तथापि उसमें आहुति ही मुख्य होती है। पहली आहुति अग्नि को उद्देश्य करके पुरोडाश की दी जाती है। दूसरी आहुति उपांशु के रूप में प्रसिद्ध है। वह विष्णु-प्रजापति-अग्नि-सोम आदि के लिए निवेदन की जाती है। तीसरी आहुति अग्नि और सोम को उद्देश्य करके पुरोडाश को अर्पित की जाती है। अमावस्या पर तो पुरोडाश निष्ठ पहली आहुति अग्नि के लिए इष्ट होती है। और दूसरी आदि आहुतियों का देवता इन्द्र होता है। और हव्य द्रव्य यथा क्रम दही और दूध हैं। इष्टियाग की समाप्ति पर अग्नि स्विष्टकृत् आहुति अग्नि के लिए अर्पित की जाती है। इसके बाद पुरोहित यज्ञ की आहुति का अवशिष्ट अंश प्रसाद के रूप में ग्रहण करते है, और वह ईडा भक्षण कहलाता है। सभी हव्य द्रव्यों के मिश्रण से ईडा प्रस्तुत किया जाता है। अनुयाज और पत्नीयाज के बाद यजमान के प्रतीक रूप में कुश निर्मित मूर्ति को अग्नि में निक्षिप्त की जाती है। वह कुशमूर्ति कुश पत्थर कही जाती है। वह मूर्ति जब अग्नि में दग्ध होकर भस्मसात् होती है, तब यजमान इस प्रकार चिन्तन करता है कि उसका पार्थिव शरीर दग्ध हो गया। तथा यज्ञ के द्वारा उसकी आत्मा ने विष्णु सायुज्य प्राप्त कर लिया। यह अनुध्यान यजमानों को प्रेरणा देता है। यजमान सोचता है कि वह विष्णु के साथ एकीभूत हो गया। और ''विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधो पदम्'' इस मन्त्र का उच्चारण करके त्रिपद जाता है। इष्टियाग नित्य और काम्य दोनों प्रकार का हो सकता है। जो निरन्तर पूर्णिमा तथा अमावास्या पर इसका अनुष्ठान करते हैं उनके लिए नित्य। और जो नित्य नहीं करते

हैं, केवल कामना सिद्धि के लिए ही करते हैं उनके लिए तो काम्य है। काम्यानुष्ठान में धान्य से पुरोडाश का निर्माण करना चाहिए, वहाँ गेहूँ का व्यवहार निषिद्ध है।

शतपथ ब्राह्मण के मत में दर्शपूर्ण मास सभी यागों की प्रकृति है। इस ब्राह्मण के आदि में ही इष्टी की आलोचना देखी जाती है। इष्टियाग के बहुत से प्रकार हैं। पुत्र की प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टि, अनावृष्टि के समय वृष्टी के लिए होने वाला इष्टि याग, खेत की प्रथम फसल देवता को अर्पण करने के लिए आग्रायणेष्टि इत्यादि। अग्निप्रीत्यर्थक पुरोडाशयाग, इन्द्रप्रीत्यर्थक पुरोडाशयाग, और इन्द्रप्रीत्यर्थक पयोद्रव्ययाग तीनों यागों का समुह दर्शयाग होता है। अष्ट कपाल पुरोडाशयाग, उपांशुयाग, और एकादशकपाल पुरोडाशयाग इन तीनों यागों का समुह पौर्णमासयाग कहलाता है। इन समान फलदायक छः यागों का समूह दर्शपौर्ण मासयाग कहलाता है। यह दर्शपौर्णमासयाग तीस वर्षात्मक होता है।

पाठगत प्रश्न

646. इष्टियाग की प्रकृति क्या है?

647. दर्श शब्द का क्या अर्थ है?

648. इष्टियाग के चार पुरोहित कौन से हैं?

649. सोमयाग में सर्वश्रेष्ठ कौन है?

650. पुरोहितों के प्रसाद भक्षण को क्या कहते हैं?

6.1.3 पशु

दैक्ष तथा प्राजापत्य पशु सभी पशुयागों की प्रकृति है। यह ही निरूढ पशुयाग के नाम से प्रसिद्ध है। आहिताग्नि त्रैवर्णिक पुरुष इस याग के अधिकारी हैं। इस याग को प्रतिशरद ऋतु में एकवार करने का निर्देश किया गया है। चाहे तो दो बार अथवा छह बार भी किया जा सकता है। यदि एक बार ही सम्पादन करना हो तो उसका वर्षा ऋतु में सम्पादन करना चाहिए। यदि दो बार करना हो तो प्रथम सूर्य की उत्तरायण वेला में तथा द्वितीय दक्षिणायन के समय में करना चाहिए। यदि छह बार करना हो तो प्रत्येक ऋतु में एक एक सम्पादन करना चाहिए।

पशु इस याग का आहूतिद्रव्य है। इसलिए यह याग पशुयाग कहलाता है। इस याग के देवता प्रजापति, सूर्य, इन्द्र अथवा अग्नि होते हैं। इस याग में छह पुरोहित अपेक्षित होते हैं - अधवर्यु, प्रतिप्रस्थाता, होता, मैत्रावरुण, अग्नि, और ब्रह्मा। इष्टि मूलक यागों में होता ही अनुवाक्य और याज्य उभयविध मन्त्रों का व्यवहार करता है। किन्तु पशुयाग में होता केवल याज्य मन्त्रों का उच्चारण करता है। मैत्रावरुण नामक ऋग्वेदीय पुरोहित अनुवाक्य

टिप्पणी

मन्त्रों का उच्चारण करता है। प्रैषमन्त्रों को भी मैत्रावरुण ही पढ़ता है।

पशुओं की आहूति के लिए खूंटे की अपेक्षा होती है। पलाश खदिर विल्व रोहितक इन चारों वृक्षों में से किसी भी एक की काष्ठ से खूंटे का निर्माण होता है। प्रत्येक खूंटे से विशिष्ट ऐहिक पारलौकिक फल का लाभ होता है। यज्ञ वेदी की पूर्व दिशा में खूंटा स्थापित करना चाहिए। साधारण तया अन्ग विहीन आदि दोष रहित बकरे ही बली के लिए लाए जाते हैं। मन्त्र पूत बकरे को पुरोहित पलाशवृक्ष की शाखाओं से स्पर्श करके ''अग्नये त्वा जुष्टमुपाकरोमि'' इस मन्त्र का पाठ करता है। इसे उपाकरण कहते हैं। बलित्व से प्रदास्यमान पशु श्वास के रोधन से मर जाता है। इस प्रकार के निधन को संज्ञपन कहते हैं। निहत पशु के अङ्ग पुरोहित समान रूप में काटता है। यज्ञ स्थल की उत्तर पूर्व दिशा में पशु संज्ञपन व्यवच्छेद आदि के निमित्त एक स्थान निर्दिष्ट है। पशु का वसा अर्थात् हृदय की मेद को अधवर्यु नामक पुरोहित आहवनी याग्नि में आहुत करता है। एक मिट्टी के पात्र में पशु के अङ्गशामित्र प्रवेश के बाद शामित्र नामक अग्नि कुण्ड में पकाए जाते हैं। याग के समय एक पुरोडाश को यज्ञाग्नि में आहुत किया जाता है। केवल प्रतिप्रस्थाता के अलावा सभी यजमान और पुरोहित समर्पित पुरोडाश के अवशेष को खाते हैं। इष्टियाग की आलोचना में कहा गया कि यह कर्म ईडा भक्षण नाम से प्रसिद्ध है। तदनन्तर पशु के पक्के हुए अ्ग मृत्पात्र से निकालकर टुकड़े टुकड़े करके अधवर्यु आहवनीयाग्नि में आहुति देता है। मिटटी के पात्र में पशु के मांस का वसा नामक जो रस सञ्चित होता है, उसकी भी पुरोहित आहुति देता है। इसके बाद ग्यारह अनुयाज और पत्नी संयाज अनुष्ठीत किये जाते हैं।

इस पशुयाग में जो पशु के संज्ञपन श्वास रोधन आदि किये जाते हैं वे पशुवध नहीं माने जाते। वैदिक विधानों के अनुसार यह न तो वध और न ही पाप होता है। यज्ञ में कोई पशु आहुत होता है तो वह पशु अपना पार्थिव शरीर छोड़कर जिस देव को उद्देश्य करके वह आहूत किया गया उस देव के समीप जाता है। यज्ञ से यह पशु अनायास ही दैवी रूप को प्राप्त करता है। पशु को उद्देश्य करके इस प्रस्ग में ऋक्संहिता का एक ऋम्मन्त्र उल्लिखित है –

''न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि देवा –
इदेसि पथिभिः सुगेभिः।'' इति।

अर्थात् हे पशू, तू मृत्युलोक को नहीं जा रहा है और न हम तेरी हिंसा कर रहे हैं। तू सरल पथ से देव के समीप जा रहा है। मनु ने भी इस मत का समर्थन किया – यज्ञे वधोऽवधः। अर्थात् यज्ञ मं किया गया वध अवध है। यज्ञ में पशु नहीं मारे जाते हैं। अपितु उसको देवत्व की प्राप्ति होती है।

पुरोडाश के ईडा भक्षण की तरह ही पशुयाग में आहूति के अवशेष पशुमांस को खाने का विधान देखा जाता है। इस पशुमांस के भक्षण के विषय में दो विपरीत मत हैं। कुछ तो पशु को यजमान का चिह्न स्वरूप मानते हैं। पशु के द्वारा यजमान स्वयं की

आहूति देकर देवत्व को प्राप्त करता है। अत: यजमान यदि पशुमांस को खाता है तो वह यजमान के लिए स्वमांस भक्षण के समान होगा। अत: यह निषिद्ध है। किन्तु ऐतरेय ब्राह्मण में इस मत को समालोचित और खण्डित किया गया है। अग्नि और सोम इन दोनों देवताओं की सहायता से इन्द्र ने वृत्र का वध किया। अत: अग्नि और सोम ने इन्द्र से एक पशु माँगा। इन्द्र ने भी प्रार्थित वर प्रदान कर दिया। यहाँ यज्ञकाल में इन्द्र द्वारा प्रदत्त वर की परिपूर्ति के लिए अग्नि और सोम को पशु बली का विधान है। यजमान के प्रतीक के लिए पशुबली नहीं दी जाती। अत: पुरोहितों के लिए अवशिष्ट पशु मांस का भक्षण दोष रहित है, तथा निषिद्ध भी नहीं है। आज भी दाक्षिणात्य पुरोहित पशुयाग में आहूत पशु का अवशिष्ट मांस प्रसाद के रूप में ही खाते हैं।

पाठगत प्रश्न

651. सभी पशु यागों की क्या प्रकृति है ?
652. पशु याग में आहुति के रूप में क्या दिया जाता है?
653. पशु याग के देव कौन हैं?
654. पशु याग के छह पुरोहित कौन से हैं?
655. खूंटा किन वृक्षों की काष्ठ से निर्मीत होता है?

6.1.4 सोम

सभी प्रकार के सोम याग की प्रकृति अग्निष्टोम है। बहुत से ब्राह्मणों में सोमयाग की विवृति देखी जाती है। सोमर रस ही सोम याग की प्रधान आहुति है। पाँच दिन तक यह याग चलता है। वहाँ पहले दिन यजमान पुरोहितों को अभिनन्दन करता है, और दक्षिणा की प्रति श्रुति देकर तथा यज्ञ का नियोजन होता है। दूसरे दिन प्रायणीय-इष्ट का अनुष्ठान किया जाता है। जिस इष्टी से यज्ञ का आरम्भ होता है वह इष्टि प्रायणीय-इष्टि कहलाती है। तदनन्तर दश द्रव्यों के विनिमय से शूद्र के साथ सोमलता का क्रयण किया जाता है। सोम जैसे देवताओं का वैसे ही ब्राह्मणों का राजा है। तीसरे दिन यज्ञस्थल की पूर्व दिशा में प्राग्वंश-नामक महा वेदी का निर्माण होता है। चौथे दिन निरूठ पशुबन्ध याग की प्रक्रिया के अनुसार अग्नि और सोम को उद्देश्य करके एक पशुयाग किया जाता है। अन्तिम दिन अर्थात् पाँचवे दिन प्रकृत अग्निष्टोम का अनुष्ठान होता है। पूर्व के चार दिनों में अनुष्ठित अनुष्ठान अग्निष्टोम अनुष्ठान की भूमिका स्वरूप होते हैं। पाँचवे दिन सोमरस का निष्काशन करना चाहिए। यह अनुष्ठान सोमाभिषव अथवा सोमसवन कहलाता है।

सभी प्रकार के सोमयाग की प्रकृति हि अग्निष्टोम याग है, वह ज्योतिष्टोम भी कहलाता है। इस याग में सोम लता का रस ही प्रधान आहुति द्रव्य है। ऐसे याग में जो बारह

स्तोत्र गाए जाते हैं, उनमें अन्तिम स्तोत्र को अग्निष्टोम कहते हैं। क्योंकि अग्निष्टोम नामक सामगान से यज्ञ समाप्त होता है, अत: तज्जन्य याग भी अग्निष्टोम कहलाता है। बहुत से ब्राह्मण यागों में सोमयाग की विवृति देखी जाती है। ऐतरेयब्राह्मण में विशेषत: अग्निष्टोम याग का विवरण है। इस ब्राह्मण में चालीस अध्याय हैं। वहाँ प्रारम्भ के सोलह अध्यायों में अग्निष्टोम याग के ऋग्वेदीय पुरोहितों का कर्तव्य विहित है।

प्रति संवत्सर वसन्त-ऋतु में त्रैवर्णिक यजमान सपत्नीक इस याग का अनुष्ठान करें। बहुत दूर दुर्गम प्रदेश से सोमलता को लाकर यत्न से उसकी रक्षा की जाती थी। अब सोमलता दुष्प्राप्य हो गई। अत: उसके स्थान पर पूतिका-लता का विधान किया जाता है। वैदिक युग में ही सोमलता दुष्प्राप्य थी। शतपथ ब्राह्मण में कहा है कि यदि सोमलता प्राप्त नहीं होती, तो पूतिका से यज्ञ सम्पन करें। इस याग में सोलह पुरोहित अर्थात् सभी अपेक्षित हैं। यजमान और ब्राह्मण मिलकर कुल सत्तरह लोग होते हैं। किसी वेदग्रन्थ में देखा जाता है कि - 'सदस्य' - नामक पुरोहित सत्तरह संख्या का परिपूरक होता है। यज्ञ के प्रथम दिन ही यजमान पुरोहितों का अभिनन्दन करता है तथा दक्षिणा की प्रतिश्रुति देकर यज्ञ का नियोजन करता है। यह रीति ऋात्विजवरण कहलाती है। तदनन्तर दीक्षणीय-इष्टी का अनुष्ठान होता है। यजमान और उसकी पत्नी यज्ञ में दीक्षित होते हैं, इस प्रकार दीक्षा से उन दोनों का नया जन्म अर्थात् आध्यात्मिक जन्म होता है। दूसरे दिन प्रात: प्रायणीय-इष्टी का अनुष्ठान विहित है। जिससे इष्ट् यज्ञ का आरम्भ होता है वह प्रायणीय इष्टि कहलाती है। इस इष्टी में पथ्यास्वति, अग्नि, सोम, सविता, और अदिति इन पांच देवाओं का आह्वान किया जाता है। अदिति पुरोडाश तथा अन्य चार देवओं के लिए तेज घृत व आज्य आहुतित्व का विधान है। याज्ञिक परिभाषा में घृत यदि तरल हो तो वह आज्य कहा जाता है, किन्तु पीण्डिभूत हो तो घृत कहलाता है। ''हविर्विलीनमाज्यं स्याद् घनीभूतं घृतं विदु:'' यह श्रुति है। प्रायणीय इष्टी के बाद सोमलता क्रयण का अनुष्ठान देखा जाता है। यह सोमक्रय कहलाता है। दशद्रव्यों के विनिमय से किसी छोटी सोमलता का क्रय किया जाता है। वे दश द्रव्य एकवर्षीय गोवत्स, सुवर्ण, एक बकरा, एक दूध देने वाली गाय और उसका बछड़ा, एक सांड, शकट वहन के लिए एक बैल, एक छोटा सांड, एक गोवत्स, और एक वस्त्र। सोम देवताओं तथा ब्राह्मणों के राजा हैं। अत: राजकीय सम्मान सहित सोम का वहन किया जाता है। पुरोहित गणों के द्वारा चालित दो बैलों के द्वारा वाहित दो शकटों से सोम यज्ञ स्थल पर लाया जाता है। राजा सोम यजमानों के मान्य अतिथि हैं। सोम के लिए आतिथ्येष्टि नामक इष्टी का विधान है यहाँ इस इष्टी में नौ मृत्क-पाल विष्णु को उद्देश्य करके पुरोडाश को अर्पण किये जाते हैं। आतिथ्येष्टी के बाद प्रवर्ग्य नामक अनुष्ठान, और तदनन्तर उपसत्-इष्टी का अनुष्ठान किया जाता है। तीसरे दिन यज्ञ स्थल की पूर्व दिशा में प्राग्वंश-नाम का महावेदी का निर्माण किया जाता है। चौथे दिन निरूढ पशुबन्धयाग की प्रक्रियानुसार अग्नि और सोम को उद्देश्य करके एक पशुयाग विहित है। इस दिन दक्षिणस्थ दिशा में हविर्विधन वेदी में सोम ले जाया जाता है। यह अनुष्ठान हविर्विधन प्रणयन कहलाता है। माध्यन्दिन सवन में पशुमांस और पुरोडाश की आहुति निर्दिष्ट है, सायन्तन अर्थात् तीसरेसवन में पशु के नाना-अङ्ग आहुति

के रूप में दिए जाते हैं। एतदनन्तर पत्नीसंयाज अनुष्ठित है। पुरोहित इस दिन प्रत्यूषा पूत सलिल में अवगाहन करके सोम सवन करते हैं। विहङ्ग काकली के आरम्भ से पूर्व होता प्रातः अनुवाक पढ़ता है। एक प्रस्तर खण्ड पर सोमलता को स्थापित करके उसके ऊपर 'वसतीवरी' नामक जल का सिञ्चन करते हैं। दूसरे पत्थर पर सोमलता के पेषण से रस निकाला जाता है। ग्रह नामक पात्र में निष्काशित सोमरस स्थापित किया जाता है, बकरे के चर्म से निर्मित 'दशापवित्र' नामक तित उसे उसका परिशोधन किया जाता है। द्रोणकलश नामक पात्र में विशुद्ध रस स्थापित किया जाता है। प्रत्येक दिन तीन बार सोमरस के निष्काशन का विधान है, प्रातः मध्याह्यण और सायंकाल। इन तीनों सवनों का नाम यथाक्रम प्रातःसवन, माध्यन्दिनसवन, तृतीयसवन है। आहुति के अवशिष्ट सोमरस का चमस से पुरोहितगण और यजमान को पान कराया जाता है। माध्यन्दिन सवन के बाद पुरोहितगण को दक्षिणा दी जाती है। गौ, अश्व, गधा, बकरा, भैसा, तिल, दाल मांस धन्य और जौ दक्षिणा के रूप में दीये जाते हैं। तृतीयसवन के बाद अवभृथ स्नान का अनुष्ठान किया जाता है। और यह अनुष्ठान अवभृथ-इष्टिनाम से जाना जाता है। यजमान और अन्य सभी पुरोहित अवभृथ स्नान के लिए जलाशय को जाते हैं। यह अवभृथ-इष्टि ही अग्निष्टोम का अन्तिम अनुष्ठान है। वरुण और अग्नि इसके इष्ट देवता हैं। चार प्रयाजों और दो अनुयाजों का अनुष्ठान विहित है। वरुण को उद्देश्य करके एक पुरोडाश अर्पण करते हैं। अवभृथ-इष्टी में सभी आहुतियाँ जल में ही दी जाती हैं, न की अग्नि में। यजमान अवगाहन रत पुरोहितों के शिर पर जल सिञ्चता है। दीक्षणीय-इष्टिकाल में यजमान और उसकी पत्नी पांच दिन तक परिधृत वस्त्र अवभृथ स्नान के अनन्तर छोड़ कर उन्नेता नामक पुरोहित द्वारा प्रदत्त नवीन वस्त्र का परिधान करते हैं। जलाशय से यज्ञ स्थल की और प्रत्यागमन के समय में यजमान उदयनीय नामक अन्तिम अनुष्ठान का आचरण करता है। उदयनीय-इष्टी में दूध-मधु-दही-शर्करा-आदि के मिश्रण से निर्मित चरु आहुति के रूपमें दी जाती है।

पाठगत प्रश्न

656. अग्निष्टोम का दूसरा नाम क्या है?

657. अग्निष्टोम में मुख्य आहुति कौन सी है?

658. किस ब्राह्मण में अग्निष्टोम का विवरण विस्तृत रूप से है?

659. देवता और ब्राह्मणों का राजा कौन है?

660. याज्ञिक परिभाषा में द्रुत घृत का क्या नाम?

661. सोमयाग के लिए कितने दिन अपेक्षित हैं?

662. प्रतिदिन कितनी बार सोमरस के निष्काशन का विधान है?

663. अग्निष्टोम का अन्तिम अनुष्ठान क्या है?

टिप्पणी

6.1.5 सत्र

हमारी लौकिक संस्कृती में बहुत से याग हमारे द्वारा परिलक्षित तथा पालित हैं। वस्तुतः तो वैदिकों के लिए याग बहुत पुण्य प्रदायक हैं। हम यहाँ बहुत से यागों के विषय में जान सकते हैं। हम जान सकते हैं कि कौन सा याग कितने दिनों में समाप्त होता है, किस प्रकार उन यागों का अनुष्ठान करना चाहिए इत्यादि।

सत्र याग की प्रकृति गवामयन नामक यज्ञ है। गवामयन याग सोमयाग के अन्तर्गत आता है। अतः गवामयन की प्रकृति अग्निष्टोम है। सत्र और गवामयन के मध्य श्रेणी विन्यास पर्यालोचना की जाती है। अतः कहा जाता है कि – यज्ञ को जातिगत दृष्टी से देखें तो गवामयन याग सोमयाग के अन्तर्गत आता है परन्तु काल की दृष्टी से उनके स्वरूप वश श्रेणी विन्यास किया जाता है। जो याग एक दिन समाप्त होता है वह एकाहयाग कहलाता है। जो याग एकाधिक दिवसीय अथवा बारह दिनों से कम दिनों में सम्पन होते हैं वे अहीनयाग होते हैं। बारह दिनों से अधिक दिन जिस याग में लगते हैं वह सत्रयाग कहलाता है। सामवेद के पञ्चविंश ब्राह्मण में विविध सत्र याग की विधि और अनुष्ठान का स्वरूप वर्णित है। गवामयन याग के सम्पादन के लिए एक वत्सर अपेक्षित है। अतः गवामयन याग सत्रयाग के अन्तर्गत आता है। सत्रयाग तीन भागों में विभक्त है – प्रथमार्ध में 180 दिन, द्वितीयार्ध में 180 दिन और तृतीयार्ध में 180 दिनों की अपेक्षा है। सौकर्य के लिए गवामयन याग के अन्तर्गत यागों के अनुष्ठान काल आदि की सूची नीचे उपस्थापित है –

	याग का नाम	**अनुष्ठानकाल-दिनसंख्या**
प्रथम से छह मास में	अतिरात्रयाग	1
	चतुर्विंशस्तोमयुक्त-उक्थ्य	1
	चत्वारः अभिप्लवषडहः (4*6=24) एकः पृष्ठ्यषडहः (1*6=1) 24+6=30(पञ्चकृत्वः आहुतिः = 30*5= 150	150
	त्रयः अभिप्लवषडहः (3*6)	18
	एकः पृष्ठ्यषडहः (1*6)	6
	अभिजित्	1
	त्रयः स्वरसामः	3
	कुल दिवस	- 180

	विषुवदिवसः (एकविंशयागः)	1
शेष मास में	त्रयः स्वरसामः	3
	विश्वजित्	1
	एकः पृष्ठ्यषडहः	6
	त्रयः अभिप्लवषडहः (3*6)	16
	एकः पृष्ठ्यषडहः (1*6=6) चत्वारः अभिप्लवषडहः (4*6 = 24) 24+6=30 (चतुःकृत्वः आहुतिः = 30*4 = 120	120
	त्रयः अभिप्लवषडहः	18
	एकः गोष्टोमः एकः आयुष्टोमश्च	2
	दशरात्रः	10
	महाव्रतः	1
	अतिरात्रः	1
	सम्पूर्ण दिवस -	180
	महायोग- 180+1+180	361

इस सूची से स्पष्ट ही ज्ञान होता है कि आदि 180 दिनों और अन्तिम 180 दिनों के अनुष्ठान में विपरीतानुक्रम का अनुसरण किया जाता है।

आदि के 180 दिनों के अनुष्ठान में प्रथमदिन में अतिरात्र और अन्तिम दिन में स्वर साम विहित हैं परन्तु अन्तिम 180 दिनों के अनुष्ठान में प्रथम दिन स्वर साम और अन्तिम दिन में अतिरात्र विहित है। अतः विपरीत अनुक्रमानुसरण वश दो की दर्पण प्रतिविम्ब से तुलना की जाती है। उपर्युक्त आवली में दोनों प्रकारों के षडह का उल्लेख दिखाई देता है, अभिप्लव षडह और पृष्ठ्य षडह। षडह याग छह दिनों में निष्पन्न होने वाला याग है। अभिप्लव षडह के छः दिन -

पहले दिन - ज्योतिष्टोम।

दूसरे दिन - गोष्टोम।

तीसरे दिन - आयुष्टोम।

चौथे दिन - गोष्टोम।

टिप्पणी

पांचवे दिन - आयुष्टोम।

छठे दिन - ज्योतिष्टोम।

अभिप्लव षडह के प्रथमर्ि दन तथा अन्तिम दिन ज्योतिष्टोम याग का विधान है। अत: कहा भी है - "उभयतो ज्योतिरभिप्लव षडह:।" दोनों ज्योतिष्टोम यागों के मध्यस्थ दिन उक्थ्यनाम से जाने जाते हैं। परन्तु पृष्ठ्य षडह के प्रथमदिन ज्योतिष्टोम याग होने पर भी अन्तिमदिन उक्थ्ययाग विहित होता है, इस दिन ज्योतिष्टोम याग नहीं होता है। गवामयन यज्ञ की अनुष्ठानावली और काल विभाग अच्छी तरह से परिलक्षित किये जाये तो ज्ञात होता है कि सूर्य की वार्षिकगति से इसका सौसादृश्य है। सम्पूर्ण याग दो विभाग में विभक्त है। और प्रतिभाग के अनुष्ठान काल में छ: माह लगते हैं प्रतिमास में तीस दिनों का अनुष्ठान भी विहित है। दोनों भागों का मध्यस्थ विषुव दिवस है। आदित्य की वार्षिक गति के दोनों भागों में भी विपरीत क्रम दिखता है। सूर्य के उत्तरायण में होने से दिन के स्थिति काल की वृद्धि होती है, दक्षिणायन में दिन के स्थिति काल का ह्रासहोता है। यह वृद्धि ह्रास समानानुपात से ही होते हैं।

गवामयन याग सोमयाग के अन्तर्गत आता है अत: सोमयाग की प्रकृति अग्निष्टोम है। इसलिए दोनों यागों के समान संख्यक पुरोहित और समानाहुति द्रव्य प्रयुक्त होते हैं। 360 दिनों से अधिक दिनों में निष्पाद्य सभी सत्र यागों की प्रकृति गवामयन याग है और 360 दिन से कम दिनों में निष्पाद्य सकल सत्र यागों की प्रकृति द्वादशाहनामक याग है।

पाठगत प्रश्न

664. सत्रयाग की क्या प्रकृति है?
665. गवामयन याग किसके अन्तर्गत आता है?
666. जो याग एक ही दिन में समाप्त हो जाते है उनके नाम लिखो?
667. जो याग एक से अधिक दिन तक किन्तु बारह दिवसों से कम दिनों तक है उसका क्या नाम है?
668. बारह दिनों से अधिक दिन जिस याग में अपेक्षित हैं, उस याग का क्या नाम है?

पाठसार

दूसरा एक याग गवामयन याग है। जो सत्रयाग की प्रकृति है। यह गवामयन याग सोमयाग के अन्तर्गत आता है। इस कारण गवामयन याग की प्रकृति अग्निष्टोम है। एक ही दिनमें सम्पन्न याग एकाह याग कहलाता है। बारह दिनमें सम्पन्न याग अहीन याग कहाता है। उससे अधिक दिनों में सम्पन्न याग सत्र याग होता है। गवामयन याग में अनुष्ठानावली

का काल विभाग के साथ सूर्य का वार्षिकगत सादृश्य है। सोमयाग की प्रकृति अग्निष्टोम है अतः दोनों के समान संख्यक पुरोहित समानाहुति द्रव्य प्रयोजन होते हैं। 360 दिनों से अधिक दिनों में जो याग सम्पादित होते हैं उन यागों की प्रकृति गवामयन याग होता है। और 360 दिनों से कम दिनों में जो याग निष्पन्न होते है उनकी प्रकृति द्वादशाहनामक याग है। इस प्रकार यहाँ संक्षेप से सोम-सत्र-पशु-आदि और कुछ याग विस्तार से वर्णित हैं। इनके अतिरिक्त भी अनेक याग हैं। उनका विस्तार के भय से यहाँ वर्णन नहीं किया जा सका। ऐसे कुछ याग वैदिक काल में आर्यों के द्वारा अनुष्ठीत होते थे, परन्तु आज काल के ग्रास से प्रायः बहुत से लुप्त हो गये। तथापि अभी भी ब्राह्मणों द्वारा ये याग बहुत सी जगह किये जाते हैं। हमें वैदिक रीति की अवश्य ही रक्षा करनी चाहिए।

पाठान्त प्रश्न

669. याग के विषय में विस्तार से व्याख्या लिखो?

670. अग्निष्टोम याग के विषय में संक्षेप से आलोचना करो?

671. सोमयाग में पांच दिनों में अनुष्ठित अनुष्ठानों का संक्षेप से विविरण लिखो?

672. सोमरस के विषय में संक्षिप्त टिप्पणी लिखो?

673. सोमयाग में पाँच दिनों में विहित अनुष्ठान का विवरण लिखो?

674. इष्टियाग कब-कब अनुष्ठीत होते हैं?

675. तीन आहुतियाँ किनको दी जाती हैं?

676. इष्टियाग के अन्तमें पुरोहित क्या करते हैं?

677. इष्टियाग किनके लिए नित्य है और किनके लिए काम्य है?

678. इष्टियाग के काम्यानुष्ठान का क्या-क्या वैशिष्टय है?

679. होम की दर्वी होम यह अभिध कैसे दी गई?

680. होमयाग में किस समय आहुति दी जाती है?

681. होमयाग की आहुति के प्रदान के विषय में कैसी मति होती है।

682. अस्वस्थ होने पर ब्राह्मण और यजमान क्या करें?

683. अग्निहोत्र विधी में अविवाहित तथा विपत्नीक को क्या करना चाहिए?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-1

684. दर्वीहोम।

685. अग्निहोत्र।

686. ब्राह्मणों का।

687. सपत्नीकों का।

688. पुनर्विवाह।

उत्तर-2

689. दर्शपूर्णमास।

690. सूर्येन्दुसङ्गम।

691. होता, अधवर्यु, अग्नीध्र, और ब्रह्मा।

692. ब्रह्मा।

693. ईडाभक्षण।

उत्तर-3

694. दैक्ष अथवा प्राजापत्य।

695. पशु।

696. प्रजापति, सूर्य अथवा इन्द्र, और अग्नि

697. अधवर्यु, प्रतिप्रस्थाता, होता, मैत्रावरुण, अग्नि और ब्रह्मा।

698. पलाश खदिर विल्व रोहितक इन चार वृक्षों में से किसी की भी।

उत्तर-4

699. ज्योतिष्टोम।

700. सोमरस।

701. ऐतरेय ब्राह्मण में।

702. सोम।

703. आज्य।

704. पाँच।

705. तीन बार।

706. अवभृथ-इष्टि

उत्तर-5

707. गवामयन नामक यज्ञ।

708. सोमयाग में।

709. एकाहयाग।

710. अहीनयाग।

711. सत्रयाग।

छठा पाठ समाप्त